ओ३म्

वार्षिक शुल्क 50/- रु.
आजीवन 500/- रु.
इस अंक का मूल्य 5/- रुपये

आर्य प्रेरणा

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(आर्यसमाज राजेन्द्र नगर का मासिक मुख-पत्र)

दूरभाषः 011-25760006 Website - www.aryasamajrajindernagar.org

वर्ष-8 अंक 8, मास जनवरी 2016 विक्रमी संवत् 2072

दयानन्दाब्द 189 सृष्टि संवत् 1960853115, सम्पादक डॉ. कैलाश चन्द्र शास्त्री

स्वामी दयानन्द सरस्वती का स्वप्न साकार करें

– हरीराम वर्मा

चले जाते हैं जाने वाले, रह जाती है उनकी यादें।
उन्हीं में से एक की मैं, कर रहा हूँ आप से बातें।

किसी कवि के उपर्युक्त कथन के अनुसार इस संसार में अनेकों लोग जन्म लेते हैं। किसी न किसी प्रकार अपना जीवन जीते हुए इस असार संसार से विदा हो जाते हैं। कुछ दिन बाद उनका नामो निशान मिट जाता है लेकिन कुछ ऐसे लोग भी होते हैं जो अपने कार्यों से अपना नाम अमर कर जाते हैं। उन्हीं में स्वामी दयानन्द जी भी एक है। जो अपने कार्य व्यवहार एवं वेद प्रचार से अपनी अमिट छाप छोड़ गये।

स्वामी दयानन्द जी ने अब अपना प्रचार कार्य प्रारम्भ किया उस समय यह भारत भूमि बाल विवाह, छुआछूत, सती प्रथा, स्त्री शिक्षा विरोध, विधवा विवाह पर रोक, अशिक्षा आदि कुरीतियों से आच्छादित थी। लोग भारतीय संस्कृति एवं वेद से दूर हो गये थे। ऐसी विषम परिस्थिति में स्वामी दयानन्द ने वेदों का प्रचार कर भारतीयों के हृदय को झकझोरा और कहा– मेरे देशवासियों यदि सुख शान्ति चाहते हो तो वेदों की ओर लौटो। अपने अदम्य उत्साह, परिश्रम, त्याग, तपस्या से उन्होंने एक नये युग का सूत्रपात किया। लोग वेदों का अध्ययन करने लगे, विधवा विवाह प्रारम्भ हो गया। स्त्री शिक्षा पर लगी रोक हट गयी। छुआछूत के बंधन ढीले पड़ गये, लेकिन इसके लिए स्वामी दयानन्द जी को नाना प्रकार के कष्ट सहने पड़े, फिर भी उन्होंने साहस नहीं छोड़ा। अपने योग बल, शिक्षा बल, ब्रह्मचर्य बल, आत्मबल से कुरीतियों एवं समाज से अकेले संघर्ष करते हुए सफलता प्राप्त की। वीर कवि ने सत्य ही कहा है –

न थे मठ मंदिर, न चेली न चेला थे।
न थे ठाट बाट न संग धेली न धेला था।
सत्य की सिरोही से सहारे सारे असत्य मत।
खेल विकट मर्दानगी का खेला था।
एक ओर सारी दुनिया के लोग थे
एक ओर स्वामी दयानन्द अकेला था।

एक अकेला मनीषी इतना सब कुछ कर गया। आज देश में बहुत आर्य समाजें है। अनेक आर्य समाज उपदेशक, प्रचारक, भजनोपदेशक सन्यासी है। लगभग देश के हर प्रदेश में संगठन की दृष्टि से आर्य प्रतिनिधि सभायें हैं, सार्वदेशिक सभायें है, इतना सब होने पर भी आर्य समाज के सिद्धान्तों, वैदिक संस्कृति एवं वेद का अपेक्षित प्रचार प्रसार नहीं हो पा रहा है। स्वामी दयानन्द द्वारा प्रारम्भ किये गये सुधार गति नहीं पकड़ पा रहे हैं। ऐसा क्यों हैं? यह एक विचारणीय प्रश्न हैं? सभी आर्य समाजियों को इस पर चिन्तन करना चाहिए।

आज हम और हमारी आर्य समाजें अपना उद्देश्य कैसे प्राप्त कर सकती हैं। इस पर मैं अपने अल्प ज्ञान से कुछ विचार एवं सुझाव प्रस्तुत कर रहा हूँ।

क्या हम केवल दैनिक अथवा साप्ताहिक हवन करके या वर्ष में एक बार समाज का वार्षिकोत्सव करके अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। सच्चा आर्य समाजी कहाने के अधिकारी हो सकते हैं? हवन करके ही हम आर्य समाज के प्रति अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं। हवन के अतिरिक्त हमें और हमारी समाज को क्या और कुछ करने की आवश्यकता नहीं है? हवन के अतिरिक्त हमें और बहुत कुछ करना होगा, तभी हम समाज का सम्मान पा सकते हैं। अपना उद्देश्य पूरा कर सकते हैं।

मेरा आप सभी से निवेदन हैं कि निम्नलिखित प्रयोग करके देखा जाये, संभवतः इससे हम अपने लक्ष्य की ओर कुछ पहुंच सकते हैं।

1. अपने चरित्र को ऊँचा उठाये :

हम अपने कार्य व्यवहार से अपने चरित्र को इस प्रकार ऊँचा उठायें कि लोग हम पर विश्वास करने लगें और हम भी

'आर्य-प्रेरणा' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

सदैव उनके विश्वास की रक्षा करें। हमें सदैव याद रखना चाहिए। चरित्र बल ही सबसे बड़ा बल है किसी ने बिल्कुल ठीक ही कहा है– मूर्ख विद्वान से डरता है, निर्धन धनवान से डरता है, निर्बल बलवान से डरता है किंतु ये तीनों ही चरित्रवान से डरते हैं।

अपने चरित्र एवं कार्य व्यवहार से हर आर्य समाजी अपने आस–पास, पड़ोस, गांव नगर में ऐसी छाप छोड़ें, ऐसा प्रमाणिक बनें कि वह परिचय का मोहताज न रह जाये। कस्तूरी की सुगंध की तरह उसका नाम गांव गली, नगर समाज में अपने आप फैल जाये। यदि कोई पूछे–भाई साहब आप श्री अर्जुन मिश्र या नन्द किशोर मिश्र को जानते हैं? इन लोगों का घर किधर पड़ेगा। लोग तुरंत उत्तर दें– अरे भाई साहब इन लोगों को कौन नहीं जानता ये तो आर्य समाज के अध्यक्ष और मंत्री है। इनका कार्य व्यवहार चरित्र ही ऐसा है कि नगर का बच्चा बच्चा उन्हें जानता है। आप अगली गली से मुड़ जायें सीधे आप उनके घर पहुंच जायेंगे। जब हर आर्य समाजी का ऐसा स्वरूप दिखाई देगा तो सफलता हमसे दूर नहीं होगी।

लेकिन क्या ऐसा संभव है? संभव नहीं तो असंभव भी नहीं। यदि हम अपने को ढालना प्रारम्भ कर दें तो एक दिन निश्चित ही ऐसी परिस्थिति आयेगी लेकिन इसके लिए त्याग तपस्या करनी पड़ेगी। सेवा का व्रत लेना पड़ेगा। कष्ट सहना पड़ेगा अपने चरित्र को ऊँचा उठाना होगा।

2. सबके सुख दुख में सहयोगी बनें :

अपने पराये सभी के सुख दुख में सम्मिलित होकर उनका यथाशक्ति सहयोग करें।

3. किसी प्रकार का गर्व न करें :

धन, पद, सम्मान, परिवार, ज्ञान का हम गर्व न करते हुए सबका सम्मान करें। सभी के साथ बराबर उठें, बैंठे, जाति पांति का भाव न रखें।

4. सत्यनिष्ठ बनें :

सत्य बोलें, सत्य मार्ग पर चलें। सत्य मार्ग पर ही विश्वास करें। सत्य को सबसे बड़ा धर्म मानें। सत्य से कभी डिगे नहीं चाहे कितना की कष्ट सहना पड़े।

5. तपस्या और त्याग अपनायें :

सब प्रकार के कष्टों को सहते हुए भी निरन्तर सत्य की ओर बढ़ते रहने का नाम तप है। हम भी इसे अपनायें और ईश्वर द्वारा तथा स्वयं उत्पन्न की गयी वस्तुओं का उपभोग स्वयं करें तथा दूसरे को भी करने दें।

6. संध्या, स्वाध्याय, हवन नित्य करें :

संध्या, स्वाध्याय एवं हवन नित्य करें तथा जनसंपर्क कर कुछ समय वैदिक संस्कृति, सिद्धान्तों एवं वेद का प्रचार करें। यदि संभव हो तो वैदिक साहित्य का वितरण करें तथा उन्हें पढ़ने के लिए प्रेरित करें।

7. औषधालय, विद्यालय का प्रबंध, निर्धन बेटियों, विधवा विवाह का आयोजन या उनमें सहयोग :

सक्षम आर्य समाजें औषधालय का प्रबंध करें जहां निर्धनों को मुफ्त औषधि दी जाए। यदि औषधि देना संभव न हो तो किसी वैद्य द्वारा मुफ्त सलाह ही दिलायी जायें। औषधि लिखी जाये। कम से कम सप्ताह में एक दिन तो ऐसा किया ही जा सकता है। एक दिन का वैद्य जी का खर्चा आर्य समाज उठायें। वैदिक साहित्य एवं संस्कृति से परिचय कराने हेतु विद्यालय चलाया जाये। जो विद्यालय चल रहे हैं उनमें इसका आभाव है। वर्ष में कम से कम एक दो विधवा अथवा निर्धन की बेटी के विवाह का आयोजन किया जाये अथवा उसमें आर्य समाजों द्वारा सहयोग किया जाए।

यदि किसी गांव, कस्बा, नगर के आर्य समाज के पदाधिकारी एवं सदस्य उपरोक्त कार्य निष्ठापूर्वक करें–करायें तो यह ध्रुव सत्य है कि उस समाज और उस समाज के सदस्यों को समाज का भरपूर सहयोग एवं सम्मान प्राप्त होगा। तब हम ऋषि दयानन्द जी के सपनों को साकार करने में समर्थ होंगे।

अंत में किसी कवि द्वारा लिखि गयी निम्न पंक्तियों द्वारा मैं स्वामी दयानन्द जी को अपना श्रद्धा सुमन अर्पित करते हुए अपनी बात समाप्त कर रहा हूँ।

तू नहीं पैगाम तेरा,
हर किसी के दिल में है।
जल रही है अब तक शमां,
रोशनी महफिल में हैं।

आगे बढ़े चलें

समय की यह पुकार है आगे बढ़े चलें
सुस्ती से कैसा प्यार है आगे बढ़े चलें
डरते नहीं खतरों से कदमों के हौसले
मन्ज़िल भी बेकरार है आगे बढ़े चलें
पीछे से आने वाले तो आगे निकल गए
अब किस का इन्तज़ार है आगे बढ़े चलें
बैठे रहे तो फिर न कभी उठ सकेंगे हम
ज़माना होशियार है आगे बढ़े चलें
खुद अपनी बिगड़ी आप बनाने की ठान लें
भगवान मददगार हैं आगे बढ़े चलें
कर्मों की श्रेष्ठता ही तो मानव की शान है
कितना भला विचार है आगे बढ़े चलें
निकले हैं घर से धर्म के प्रचार के लिए
क्या चीज़ जीत–हार है आगे बढ़े चलें
संसार में हो शान्ति वेदों के ज्ञान से
मिटने को अंधकार है आगे बढ़े चलें

– वेदप्रकाश शर्मा,
अतुल, गुजरात

"बाजार"

पढ़ना नहीं है
और डिग्री चाहिए
सीखना नहीं और
बनना है विशेषज्ञ
बाजार ने मनुष्यों की
जल्दबाजी और कायरता को समझा
और खोल ली दुकानें
सब कुछ बिक रहा है
डिग्री, डिप्लोमा, प्रमाण–पत्र
आता कुछ नहीं है
और मान्यता प्राप्त संस्थान ने
बना दिया विशेषज्ञ
नीम हकीम खतरे जान
कितने सारे डॉक्टर, इंजीनियर,
वकील, शिक्षक हो गये हैं
नतीजा ये पुल गिरा वो मरीज मरा
बेगुनाह फांसी चढ़ा
बच्चे ट्यूशन, कोचिंग के भरोसे
पास हो रहे हैं
दुकाने खुली हैं
बाजार सजा है
पैसा फेंको और जो चाहे बनो।

–देवेन्द्र कुमार मिश्रा

जीवन की शान्ति

डॉ॰ कैलाश चन्द

संसार में मनुष्य की आदि और अन्तिम समस्या यदि कोई है तो वह है शान्ति की समस्या। वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक सभी क्षेत्र में मनुष्य शान्ति चाहता है, सुख और आनन्द की अभिलाषा करता है। सदा से मानव स्वभाव रहा है कि वह शरीर, मन, परिवार और समाजादि की दृष्टि से सुरक्षित रहना चाहता है। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में यह विचित्र विडम्बना है कि जब-जब मनुष्य के पास भौतिक साधन अधिक हुए हैं तभी उसकी शान्ति एवं सुरक्षा की समस्या अधिक जटिल व दुरुह हुई है। प्राचीनकाल में कम भौतिक संसाधन थे संसार का मनुष्य सुखी था। आधुनिक विकसित एवं वैज्ञानिक युग में मानव की शान्ति की समस्याएँ अधिक दुर्भेद्य और दुर्गम प्रतीत होती हैं। विश्व की समस्त समस्याओं का मूल मानव मन है।

वैदिक संहिताओं में मन के, जीवन-जगत् के सभी समस्याओं के निराकरण एवं समाधान के स्रोत सूत्र रूप में उपलब्ध हैं। मनस्तत्त्व के अध्ययन के द्वारा विश्व को **'सर्वे भवन्तु सुखिनः'** का नारा देकर **'बसुधैव कुटुम्बकम्'** बनाया जा सकता है।

वैयक्तिक जीवन में शान्ति :-

व्यक्ति समाज और राष्ट्र की प्रथम इकाई है। व्यष्टि से ही समष्टि बनती है। मनस्तत्त्व के ज्ञान से मनुष्य के जीवन में, चिन्तन में सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। मनुष्य की चेतना का स्तर विकसित होगा, मानसिक तनाव का स्तर कम होगा। इन्द्रिय जन्य मानसिक व बौद्धिक स्तर के आनन्द के साथ आध्यात्मिक आनन्द की प्राप्ति होगी। हताश एवं निराश मनुष्य को जीवन में ऊर्जा मिलेगी। क्योंकि मन्त्रों के भावों में विशेष शक्ति होती है। मन्त्रों से ही भाव सुन्दर बनते हैं। पवित्र भाव एवं विचार मनुष्य को ध्यान की ओर प्रेरित करते हैं। ध्यान का अर्थ है- ध्यानं निर्विषयं मनः। जब मन ही बाह्य विषयों से रहित हो गया फिर अशान्ति कैसी? ध्यान मानसिक स्वास्थ्य को एवं प्राणायाम जो कि मनस्तत्त्व का एक अंग है शारीरिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाते हैं। मनुष्य को उन्नत, स्वस्थ जीवन जीने के लिए बाह्य साधनों की कम, स्वस्थ, श्रेष्ठ विचारों की अधिक जरूरत होती है। मनुष्य का दैनिक व्यवहार मन की चञ्चलता से प्रभावित होता है। जिसके कारण अनेक समस्याएँ, उलझनें, विवाद मन-मुटाव, लड़ाई-झगड़े आदि बढ़ते हैं। मन की चञ्चलता से क्रोध जल्दी आता है। क्रोध से कई बार ऐसे अनर्थ हो जाते हैं जिससे जीवन, परिवार एवं समाज नरक बन जाते हैं। अधिक बोलने से मानसिक चञ्चलता बढ़ती है। मौन से मानसिक चञ्चलता दूर होती है, जो मन की चाह के पीछे चलते हैं, वे सदा दुःखी, अशान्त, चिन्तित, तनावग्रस्त रहते हैं। सामान्य मनुष्य मन को राजी करने में जीवन गुजार देता है। जलती आग में घी डालने से जैसे आग और तेज हो जाती है ऐसी ही मन की दशा है। मन की दशा और दिशा विचारों से बदलेगी। विचारों के बदलते ही जीवन की दृष्टि बदल जाती है। दृष्टि के बदलते ही सृष्टि बदल जाती है।

वैदिक मन्त्रों के उच्चारण से एवं आचरण से मनुष्य की ध्यान एवं प्रेरक शक्ति बढ़ेगी। आत्मविकास के लिए मनोविकास प्रथम साधन है। विश्व के लोगों के लिए वेदों के मन्त्र संजीवनी हैं।

पारिवारिक जीवन में सामञ्जस्य :-

वैदिक संहिताओं में परिवार के सभी सदस्यों को किस प्रकार रहना चाहिए इसका वर्णन अनेक सूक्त और मन्त्रों में (यथा अथर्ववेद के साम्मनस्य सूक्त) प्राप्त होता है। किसी भी परिवार के अन्दर वास्तविक शान्ति के लिए एक हृदय, एक मन और एक भोजन होना आवश्यक है। कल्याणयुक्त वाणी, द्वेष रहित व्यवहार, श्रेष्ठ परिवार का आधार है। बड़ों को सम्मान, छोटों को प्रेम, स्नेह युक्त शिष्टाचार का व्यवहार उत्तम संस्कारों की परम्परा को आगे बढ़ाता है।

हम अपने संसार को मधुर संसार बनाना चाहते हैं। मधुर विश्व का सुनिर्माण परिवार से ही होता है। वैदिक संदेश-

मधुमन्मे निक्रमणम् मधुमन्मे परायणम्।

अथर्व 1.34.3

जीवन को माधुर्यपूर्ण होने के लिए संदेश देता है। प्रत्येक मनुष्य यही चिन्तन करे- मेरा मस्तिष्क, चिन्तन, विचार, मेरे नेत्र एवं दृष्टि मेरा श्रोत्र एवं श्रवण, मेरी नासिका, मेरे घ्राण और प्राण, मेरी मुस्कान, वाणी, रसना, कण्ठ, स्वर, मेरे हाथ, काम, सेवा, अभिवादन, हृदय, मन, संकल्प, चित्त, भावना, प्रेम, श्रद्धा, मेरी आत्मा और आत्मीयता, मेरे शरीर के सम्पूर्ण तत्त्व सदैव मधुर हों। जीवन का यह अभ्यास ही परिवार को स्वर्ग बना देगा।

परिवार की सुख और शान्ति का प्रभाव समस्त समाज तथा विश्व पर पड़ता है। ऋषियों ने भी गृहस्थ आश्रम का अनुसरण किया था। वे गृहस्थी होते हुए भी मनोजेता थे। अतः पारिवारिक जीवन से उन्हें सन्तुष्टि थी। परिवार में एक-दूसरे सदस्यों का विश्वास एवं उत्तम समायोजन के लिए वेद में 'संज्ञान' एवं 'साम्मनस्य' रूपी प्रबन्धन का निर्देष है। श्रुति एवं स्मृति ग्रन्थों में गृहस्थ को स्वर्ग बतलाया है परन्तु गृहस्थ तभी स्वर्ग है जब उसमें सुख और शान्ति रहे। आज भौतिक संसाधनों के कारण परिवारों में वैमनस्य है। कलह का कोलाहल प्रत्येक परिवारों में देखा जा सकता है। बड़े-बड़े धनवानों के

घरों में सुमन के अभाव में, कुसमायोजन के कारण अशान्ति है। परिवार की शान्ति कोई बाहर की वस्तु नहीं है इसीलिए वेद सौमनस् का उपदेश देता है।

सामाजिक समस्याओं का निराकरण :-

हम चाहे आधुनिक युग में जी रहे हों और चाहे प्राचीन युग में जी रहे थे यह निर्विवाद सत्य है कि सभी समस्याओं का निदान वैदिक जीवन मूल्यों को स्वीकार कर उसके अनुसार आचरण करने से ही होगा। भौतिकता मानव की आध्यात्मिक (मानसिक) और सामाजिक असन्तुष्टि की खाई को पाट नहीं सकती। आज आन्तरिक तल पर मानव इतना अधिक दरिद्र, आंकृित, आक्रामक एवं अशान्त है जितना कि वह आदिम युग में भी न रहा हो। प्रतिदिन बढ़ती हुई अनिद्रा की बीमारियाँ, मनोविकृतियाँ, नैतिक मूल्यों का विरोध करने की वृत्तियाँ, ध्वंसात्मक प्रवशत्तियाँ, भ्रष्टाचार, नित नये रोगों का सृजन, शिक्षा की समस्या, विक्षिप्तता एवं आत्महत्या की समस्या, अकर्मण्यता एवं पुरुषार्थ के बिना वैभव प्राप्ति की आकांक्षा आदि ऐसे तथ्य हैं जो उपयुक्त कथन की पुष्टि करते हैं।

इस बढ़ते हुए मानसिक सन्त्रास का महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि आज का मनुष्य वर्तमान सभ्यता की जटिलता के कारण न तो अपनी इच्छाओं को सहजरूप में अभिव्यक्त कर उनकी पूर्ति कर सकता है और न वह अपनी बढ़ती हुई आकांक्षाओं से ही मुक्ति प्राप्त कर सकता है। भीतर वासनाओं का तूफान और ऊपर तथाकथित सभ्यता का आवरण इन दो तलों के संघर्ष में मानव स्वयं ही खण्डित हो रहा है। एक गहरी रिक्तता एवं संघर्षों से भरी द्वन्द्वात्मकता आज के मानवसमाज की दुर्भाग्यपूर्ण गाथा है।

मनस्तत्त्व का ज्ञान व्यक्तिगत जीवन के लिए जितना उपयोगी है, उतना ही वह सामाजिक जीवन के लिए भी क्योंकि वैयक्तिक सन्तुलित जीवन ही सामाजिक जीवन के सुप्रबन्धन का आधार है। वेद का सिद्धान्त है-

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्॥

यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्येवानुपश्यति। सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विचिकित्सति॥

सामाजिक जीवन की पवित्रता के लिए, अर्थशुचिता, त्यागपूर्वक भोग, लालसा का त्याग, सभी प्राणियों के प्रति मित्रभाव एवं आत्मवत् दर्शन इस सामाजिक व्यवस्था का मूल मन्त्र है। मानव समाज का जो आदर्शमय चित्रण वेद में मिलता है वह विश्व के अन्य साहित्य में मिलना कठिन है। वेद का समस्त मानव समाज एक है जहाँ द्वेष, चोरी, अत्याचार, हिंसा आदि का कोई स्थान नहीं। समाज की समस्याओं के लिए वैदिक उपचार है-

संगच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।[3]

समस्याएँ आचरण भ्रष्ट होने से उत्पन्न होती हैं। वेद में इन्द्र के लिए **'यो जात एव प्रथमो मनस्वान्'** कहकर उसे मनस्वी बताया है। ऐसे ही श्रेष्ठ जनों को मनस्वी होना चाहिए। क्योंकि समाज की दुर्गति का कारण भ्रज्ट आचरण (भ्रष्टाचार) एवं रोगी मन है।

यद्यदा चरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥[4]

अर्थात् बड़े लोग जैसा आचरण करते हैं वैसा ही साधारण लोग भी। बड़े जिस बात को आदर्श बना लेते हैं, सामान्य जन भी उसी का अनुकरण करते हैं। इसीलिए वेद में 'अनुव्रत' शब्द का प्रयोग किया है। अहिंसा, सत्य, संकल्प, श्रद्धा, ब्रह्मचर्य, शौच, सन्तोष, तप, सादा जीवन, शुद्ध आचरण ये मन के ऐसे शाश्वत गुण हैं जो सामाजिक समस्याओं के निदान के लिए रामबाण के समान हैं।

आर्य स्त्री समाज मन्दिर (बहावलपुर)
1/77 पुराना राजेन्द्र नगर नई दिल्ली-110060
के तत्वावधान में

वार्षिकोत्सव

के उपलक्ष्य में यज्ञ, भक्ति संगीत, वेदप्रवचन

सोमवार 15 फरवरी 2016 से रविवार 21 फरवरी 2016 तक
जिसमें आर्य जगत के उच्च कोटि के विद्वान व संगीतकार पधार रहे हैं। इस शुभ अवसर पर आप इष्ट मित्रों सहित सादर आमंत्रित हैं। अधिक से अधिक संख्या में पधार कर धर्म लाभ उठाएँ एवं सत्संग की शोभा बढ़ाएँ। विशेष जानकारी के लिये संपर्क करें।
फोन नं. 9810884124, 011-25760006

पञ्च महायज्ञ

यज्ञ शब्द की सिद्धि पाणिनीय धातुपाठ के "यज्ञ देव पूजासंगतिकरण दानेषु" (पा.धा 1/728) धातु से नङ्. प्रत्यय करके होती है। धात्वर्थ के अनुसार जिसके द्वारा या जिसमें देवपूजा, संगतिकरण और दान किया जाता है, उसे यज्ञ कहते हैं। यही यज्ञ शब्द का अर्थ है। निरुक्त में यज्ञ शब्द के पन्द्रह पर्यायवाची दिये हैं।

यज्ञो वेनोऽध्वरो मेघो विदथः सवनं मखः। इष्टिः होत्रा देवताता विष्णुः
इन्द्रः प्रजापतिः धर्म्मः नार्यः पंचदश यज्ञनामानि चक्षते।। (निरुक्त-3/17)

यज्ञ शब्द इतना व्यापक है कि जगत् के जितने भी परोपकारमय कर्म हैं वे सब यज्ञ शब्द के द्वारा कहे जा सकते हैं।

हमारे प्रेरणास्रोत ऋषियों ने समस्त मानव समाज को पञ्चयज्ञों को करने का आदेश दिया है। यहाँ तक की इन यज्ञों को कभी भी न छोड़ने का विधान किया है और कहा है-

अध्यापनं ब्रहमयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम्।
होमो दैवो बलि र्भौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम्।
"पञ्च क्लृप्ता महायज्ञाः यथःशक्ति न हापयेत्" मनु. 3/70-71

(1) यज्ञों की परम्परा में प्रथम यज्ञ ब्रह्मयज्ञ है। "ब्रह्म परमात्मा, ब्रह्म वेदः तौ इज्येते यस्मिन् स ब्रह्म यज्ञः"

अर्थात् ब्रह्मनाम परमात्मा और वेद का है। उन् परमप्रभु और वेद दोनों का संगमन जिसमें होता है वह ब्रह्मयज्ञ कहलाता है।

ब्रह्मयज्ञ के दो भाग है- (1) ईश्वरोपासना (2) स्वाध्यायः

ईश्वर की स्तुति - गुणों पर विचार, जिससे ईश्वर में रूचि और श्रद्धा जागृत हो। प्रार्थना - पूर्ण पुरुषार्थ के उपरान्त प्रभु से कृपा की याचना और उपासना-प्रभु से सामीप्य की अनुभूति करने के साथ ईश्वर के अनुकूल गुण, कर्म, स्वभाव बनाने का प्रयत्न ब्रह्मयज्ञ का प्रथम भाग है। द्वितीय भाग स्वाध्याय का अर्थ है- "स्वं अध्ययनम् अथवा स्वो नाम वेदः तस्याउध्यायोऽध्ययनं स्वाध्यायः" अर्थात् अपना अध्ययन-आत्मनिरीक्षण और वेदाध्ययन को स्वाध्याय कहते हैं।

आचार्य व्यास योगदर्शन की व्याख्या में स्वाध्याय शब्द को और व्यापक बनाते हुए लिखते हैं-

स्वाध्यायः प्रणवादिपवित्राणां जपो मोक्ष शास्त्राध्ययनम् वा (योगदर्शन-(2/9) अर्थात् प्रणव (ओ३म्) का जप और मोक्ष शास्त्र का अध्ययन करना स्वाध्याय है। जिससे प्रभु के प्रति अति प्रेम के कारण मुक्ति प्राप्त हो उस विषय वाले ग्रंथों वेद उपनिषद, दर्शन आदि आर्ष ग्रंथों का अध्ययन स्वाध्याय है।

(2) मनुष्य का द्वितीय करणीय कर्म द्वितीय यज्ञ देव यज्ञ है। देवान् यज्ञन्ति संगछन्ते येन कर्मणा अथवा देव इज्यन्ते संगम्यन्ते यस्मिन् स देव यज्ञः

अर्थात् जिसमें देवों का यजन करते हैं उनके साथ संगमन करते हैं उसे देव यज्ञ कहते हैं। इसी को अग्निहोत्र, होम, हवन, यज्ञ आदि शब्दों के द्वारा भी कहा जाता है।

हुयते दीयतेऽसौ होमः यज्ञो वा "अर्थात् जो दिया जाता है अथवा जिसमें दिया जाता है उसे होम कहते है।

अग्निहोत्र शब्द में अग्नि और होता दो शब्द मिले हुए हैं। होत्र शब्द पूर्वोक्त हु धातु से ही बना है। इस शब्द की व्याख्या करते हुए दयानन्द ने लिखा है- अग्नये परमेश्वराय जल वायु शुद्धि करणाय च होत्रं हवनं दानं चस्मिन् कर्मणि क्रियते तद्‌ग्निहोत्रम्। अर्थात् अग्नि स्वरूप परमेश्वर के लिए और जलवायु की शुद्धि के लिए होत्र-हवन, दान जिसमें किया जाता है उसे अग्नि होत्र कहते हैं।

सभी पञ्चतत्वों क्षिति जल, पावक गगन, समीरा को शुद्धि, पवित्र, सुस्थिर और स्वस्थ रखने के लिए ऋषियों ने सुन्दर समिधा को जलाकर उसमें घृतादि सुगन्धित, मिष्ट, पुष्टिकारक एवं रोगनाशक पदार्थो को डालकर इनको वायु के माध्यम से समस्त वातावरण में सम्प्रेषित करके समस्त जगत, पशु, पक्षी, प्राणी, वनस्पति, वायु, जल सबको स्वस्थ व संरक्षित करने की जा व्यवस्था हमें प्रदान की है उस व्यवस्था का नाम है देवयज्ञ। स्वास्थ्य की दृष्टि से हवन का बड़ा महत्त्व है, इससे वातावरण शुद्ध होता है। श्री मद्‌भगवद् गीता में व्यास जी ने श्री कृष्ण के मुख से कहलाया है-

अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः।
यज्ञाद् भवति पर्जन्यः यज्ञः कर्मसमुद्भवः।।

अर्थात् अन्न से प्राणी होते हैं, अन्न मेघ से होते हैं मेघ यज्ञ से वनते हैं और यज्ञ कर्म से उत्पन्न होता है। कर्म करें तो यज्ञ करें क्योंकि यज्ञ से बादल बनते हैं बादलों से वर्षा होकर वर्षा जल के कारण अन्न उत्पन्न होता है और अन्न से प्राणी उत्पन्न होते और जीवन प्राप्त करते हैं। अतः यज्ञ हमारे जीवन का कारण है ये यज्ञ हमारी संस्कृति के साथ रचे बसे हैं।

देवताओं की स्तुतपूर्वक हवन करना ही देवयज्ञ है। हवन के माध्यम से मनुष्य देवताओं से प्रेरणा और शक्ति प्राप्त करता है तथा अपने व्यक्तित्वत्व का विकास करता है। अग्निहोत्र अनेक प्रकार के होते हैं। उत्तरराम चरित 1/4 के संसार प्रसंग में द्वादश वार्षिक सत्र (बारह वर्ष तक) चलने वाले यज्ञ का उल्लेख मिलता है। महाकवि शूद्रक प्रणीत 'मृच्छ कटिक' नामक रूपक का नायक यह मानता है कि तप-मन-वाणी एवं बलिकर्म से पूजित, देवता शान्त चित्त वाले व्यक्ति से अवश्य प्रसन्न होते हैं अतः देवार्चन गृहस्थ का दैनिक धर्म है।

तृतीय यज्ञ पितृ यज्ञ है।

पितृयज्ञ शब्द से कोई यह न समझे कि यह यज्ञ केवल पिता के लिए है। किन्तु संस्कृत व्याकरण के अनुसार माता और पिता शब्द के द्वन्द्व समास में अर्थात् एक शब्द में कहने के लिए जब हम माता च पिता च (पिता और माता) ऐसा विग्रह करते हैं तो माता शब्द का लोप हो जाता है और द्विवचनान्त पिता शब्द के रूप चलते है। वहाँ पिता शब्द का अर्थ माता और पिता दोनों हैं यथा-माता च पिता चेति पितरौ अथवा माता पितरौ। ताभ्यां पितृभ्यां यज्ञः पितृयज्ञः। अर्थात् माता पिता के लिए अथवा माता-पिता के साथ जो उनके अनुकूल सद्-व्यवहार है वह पितृयज्ञ है। पितृभ्याम् शब्द तृतीया विभक्ति और चतुर्थी विभक्ति के द्विवचन में बनता है इसलिए दोनों विभक्यिों के अनुसार माता और पिता दोनों के लिए (चतुर्थी) और माता-पिता के साथ (तृतीया) जो यज्ञ संगमनीय व्यवहार है वही पितृयज्ञ है।

पितृ शब्द "पा रक्षणे" धातु से बना है। धात्वर्थ के अनुसार रक्षा करने वाले, पालन करने वाले को पिता कहते हैं। इसी प्रकार "मा माने" धातु से माता शब्द की निर्मिति हुई है। निर्माति या सा माता जो निर्माण करती है उसे माता कहते हैं। दोनों के लिए किया जाने वाला जो यज्ञ है वह पितृयज्ञ है।

(4) गृहस्थ के कर्तव्यों में चतुर्थ कर्तव्य अतिथियज्ञ है। अतिथये यज्ञः संगमनीयो व्यवहारः अतिथियज्ञः। अर्थात् अतिथि के लिए कर्तव्य अतिथियज्ञ कहलाता है। प्रश्न है कि आतथि किसे कहते हैं? अतिथि शब्द की सिद्धि "न तिथि र्यस्य निश्चिताऽगन्तु सोऽतिथिः" अर्थात् जिसके आगमन की कोई तिथि निश्चित नहीं है उसे अतिथि कहते हैं।

इस प्रकार भी की जाती है। तथा "अत सातत्यगमने" धातु से "इथि" प्रत्यय करके भी अतिथि शब्द की सिद्धि की गयी है। इस सिद्धि के अनुसार "अतति निरन्तरं गच्छति भ्रमतीति अतिथिः अकस्मादागतः सज्जनोवा। न विद्यते नियता तिथिरस्येतित्युत्पयन्तरम्" अर्थात् जो निरन्तर चलता है, भम्रण करता है उसे अतिथि कहते है जिसकी

नियत तिथि नहीं है वह भी अतिथि है।

भारतीय समाज में अतिथि को देवता माना गया है – "अतिथि देवो भव।

इन व्याख्याओं के आधार पर जो वेद स्वाध्यायी, वेदाध्यापक, उपदेशक निरन्तर भ्रमण करते हुए जगत कल्याण के लिए उपदेशादि कर्म करता हो ऐसा विद्वान, वानप्रस्थ व संन्यासी अतिथि कहाता है। व्यापक अर्थों में जो हमारे घर आता है और जिससे किसी प्रकार के अहित की संभावना नहीं है वह हमारा अतिथि है उसे आने पर स्वागत करना जल देना भोजन कराना, वसत्र देना, मनसा वाचा कर्मणा यथायोंग्य प्रीति पूर्वक, धर्मानुसार व्यवहार करना ही अतिथियज्ञ कहलाता है।

(5) हमारा पाँचवाँ अपरित्यज्य अपरिहार्य कर्म पञ्चमयज्ञ बलिवैश्व देवयज्ञ "अथवा" भूतयज्ञ" है। भूतों को प्राणियों को तृप्त रखने के लिए जो उचित व्यवहार कर्म है वही भूत यज्ञ है। विश्वेदेवा बलिनो भवन्ति येन कर्मणा स बलिवैश्वदेवः जिस कर्म से सब देवता बली होते हैं वह कर्म बलिवैश्वदेव कहाता है।

मनुष्य चाहे तो सारी धरती के प्राणियों को समाप्त कर सकता है किन्तु सब के नष्ट हो जाने पर मनुष्य भी धरती पर जी नही सकता। हमारी जीवन रक्षक दवाइयों में शहद का प्रायः प्रयोग होता है। किन्तु मनुष्य ने दो अरब वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी शहद बनाना नहीं सीखा है। शहद के लिए मनुष्य आज भी नन्ही सी मक्खी पर निर्भर है। रेशम प्राप्त करने के लिए भी हम रेशम के कीड़ों पर आश्रित हैं। नन्हा सा अस्थिविहीन जन्तु केंचुआ हमारी मिट्टी में गहराई तक जाकर मिट्टी में रन्ध्र बनाकर मिट्टी को उपजाऊ बनाने में हमारा परम सहयोगी होता है। सबसे खतरनाक बताया जाने वाला सर्प वातावरण से जहरीली वायु को लेकर खुद जहरीला बन जाता है। और हमारे लिए शुद्ध आक्सीजन ग्रहण कराने में सहयोगी बनता है। गायें, बकरियाँ, भैंसे, भेड़े, ऊँटनी सब अपने मूत्र, गोबर एवं दूध तथा दूध से बने अन्य घृतादि पदार्थों द्वारा मानव जाति की सेवा करते रहते हैं। शीत से बचने के लिए मनुष्य आज भी भेड़ों के ऊन पर निर्भर है। कहाँ तक कहें जितने भी जीव जन्तु हैं वे सब किसी न किसी रूप में मानव जाति की सेवा ही कर रहे हैं। वृक्ष वनस्पति जल, थल, नभ सब हमारा हित करने में अहर्निश तत्पर हैं। इन सब जीव जन्तुओं, वृक्ष वनस्पतियों को बली बनाने के लिए "बलिवैश्वदेव यज्ञ" का विधान हमारे वैज्ञानिक ऋषियों ने किया है जिसमें अग्नि में दश आहुतियाँ देने और सब के लिए यथोचित भाग निकालकर यथोचित स्थान पर रखने का विधान किया गया है। भोजन बनाने पश्चात् सिद्ध अन्न से आहुति के पश्चात् वह अन्न कुत्तों, रोगादि पीडितों, कौओं और कीड़ों के लिए भी रखना चाहिए–

शुनां च पतितानां च श्वपचां पापरोगिणाम्।
वायसानां कृमीणां च शनकैर्निर्वपेद् भुवि ।।

मनु 3.92

भारतीय मनीषियों ने, वैदिक ऋषियों ने मानवों के लिए इन पाँच कर्तव्य कर्मों का विधान प्रत्येक मानव के लिए किया है इनका न करना पाप है। इनको सम्पन्न करना सर्वविध मंगल का कारण है।

आध्यात्मिक उद्‌गार शायरी

राग राही को मंजिल से हुआ करता है।
द्वेष माँझी को साहिल से हुआ करता है।।

हर पत्थर भगवान् बन गया, मानव बना कोई नहीं।
जिसे बिठालूँ मन-मन्दिर में, प्रतिमा कोई सजी नहीं।।

धूलि पै चलने वाले सभी अज्ञान नहीं होते।
फूलों पर सोने वाले सभी गुणवान् नहीं होते।।

आसमाँ की सोभा शून्य से नहीं, सितारों से है।
देश की शोभा गद्दारों से नहीं, वफादारों से है।।

प्यार भीरु में भी जान डाल देता है।
प्यार मूक से भी विरूदावली गवा देता है।।

विघ्न से न घबराओ विघ्न आते ही हैं।
जीना है अगर तुम्हें सबल बनकर बढ़ते जाओ।।

मै न बँधा हूँ देश काल की जंग लगी जंजीर में।
मैं न खड़ा हूँ जाति-पाँति की ऊँची-नीची भीड़ में।।

आयु तो बड़ी हुई है, पर उत्साह वही है।
नदियाँ तो हैं सूखी पर प्रवाह वही है।।

बहुत-से लोग अपने ही दुःखों के गीत गाते हैं।
होली हो या दीवाली सदा मातम मनाते हैं।।

एक तन सोने से लदा हुआ, एक तन पे सूत का तार नहीं।
इसलिए बगावत करता हूं, ये न्याय मुझे स्वीकार नहीं।।

चाँदी के चन्द टुकड़ों के ऊपर, ईमान खरीदे जाते हैं।
शैतानों की दुनिया में, भगवान् खरीदे जाते हैं।।

श्वानों को मिलता दूध, वस्त्र, भूखे बच्चे चिल्लाते हैं।
माँ की हड्डी से चिपक-ठिठुर, जाड़े की रात बिताते हैं।।

युवती की लज्जा वसन बेच, जब व्याज चुकाये जाते हैं।
मिल मालिक तेल फुलेलों पर, पानी सा द्रव्य बहाते हैं।।

तड़प रहा इन्सान भूख से, दानव बदले भेष को।
ये कैसी आजादी दे दी, तुमने मेरे देश को।।

कैसे पेट अकिंचन सोय रहे, बिन भोजन बालक रोय रहे।
चिथड़े तक भी न रहे तन पे,
धिक् थक पड़े इस जीवन पे।।

हृदय में सत्य वैदिक ज्ञान का पावन उजाला हो।
न हो आलस्य यम नियमादि का व्रत पूर्ण पाला हो।।

तिलक में बू आये क्या, माँ बाप के अवतार की।
दूध तो डब्बे का है, और तालीम है सरकार की।।

आशा थी कि कालिज, से मिलेगी शिक्षा।
परीक्षा पास का यह, तो यन्त्र निकला।।

घिसते-घिसते पुस्तकों को, हम भी घिस गये।
धैर्य शक्ति और साहस, निराशा में पिस गये।।

खुदा बचाएँ यह कालिज की, तरबियत का असर।
निगाहें डाली जाती, हैं राहगीरों पर।।

हम ऐसी कुल किताबें, काबिले जब्ती समझते हैं।
जिन्हें पढ़कर के लड़के, बाप को खब्ती समझते हैं।।

मैट्रिक मरने से बचे, बी.ए. बेहाल हैं।
एम. ए. मरने पधारिए, यह शिक्षा का हाल है।।

क्या कहें अहबाब हमारे, कारे-नुमाया कर गये।
बी.ए. किया नौकर हुए, पैंशन मिली और मर गये।।

बिना योग्यता के डिग्री भी, दुःख ही तो बन जाती है।
तथा प्रशंसा के बदले, सर्वत्र हंसी करवाती है।।

आएँगे खत अरब से, जिनमें लिखा यह होगा।
कि गुरुकुल का ब्रह्मचारी, हलचल मचा रहा है।।

हंस के दुनिया में मरा कोई रोके मरा।
जिन्दगी पाई मगर उसने जो कुछ होके मरा।।
जी उठा मरने से वह, जिसकी प्रभु पर थी नजर।
जिसने दुनिया को ही पाया था, वह सब खोके मरा।।

हिमादी तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती।
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला स्वतन्त्रता पुकारती।।

देश की एकता की आधार शिला

–आचार्य मुन्शीराम शर्मा

संघे शक्ति–कलियुगे यह सूक्ति बहुत दिनों से संस्कृत समाज में प्रचलित है। व्यवहार में भी इसकी सत्यता प्रमाणित होती है। जब तक हम एक रहें, तब तक किसी शत्रु की आंखे हमारी ओर वक्र नहीं हुई। हम एक नहीं है प्रयुक्त विभक्त हैं– इस विचार ने शत्रु को हम पर आक्रमण करने के लिए प्रेरित किया। प्रत्येक जाति में विभाजन की प्रेरक कई तत्व क्रिया–शील रहते हैं। सबसे भयंकर तत्व अर्थ और सत्ता का है। सम्भव है कि आर्य वंश में यह तत्व उसके अपने पापों के कारण समुद्भूत होता हो, पर यह तो ऐतिहासिक तथ्य ही है। इसके प्रभाव की प्रेरणा में विदेशियों के आगमन और उनकी प्रधान नीति ने भारी भाग लिया है। यह भी अब खोज का विषय नहीं रहा कि विदेशी जातियों ने यहां बस कर आर्य रक्त में संकर्य उत्पन्न किया और विदेशी आक्रान्ताओं को भी इस वसुन्धरा की स्वर्ण राशि लूटने के लिए आमन्त्रण दिया। आर्य वंश एक था। उसकी संघ शक्ति प्रबल थी। उसकी मनीषा जागृत थी। अतः प्रारम्भ के आक्रमण का उसने शीघ्र समूल उन्मूलन कर डाला। परन्तु जो आक्रान्ता यहां बसते गये उनमें से कुछ की नीति परिवर्तित नहीं हुई। रक्त संकल्ता के कारण हममें से ऐसे भी व्यक्ति निकल पड़े जो हमारा अंग होते हुए भी विजातिय प्रेम को हृदय में स्थान देते थे। परिणात्मतः आर्य संघ में ऐक्य का अभाव होता गया। परकीयता के प्रवेश द्वारा हमारे लक्ष्य एवं उद्देश्य में भिन्नता आने लगी और जब बाहर से आक्रमण हुए तो इस परकीय अंश के प्रभाव में पोषित व्यक्तियों ने खुलकर देश के विरुद्ध आक्रमण कारियों का साथ दिया।

कहने को तो विभिन्नता के बीज महाभारत काल में ही बोए जा चुके थे और उनमें भी परत्व प्रियता प्रधान कारण थी, परन्तु सिकन्दर के आक्रमण के समय तो फूट ने खुलकर अपना खेल किया। आम्भीक सिकन्दर के आगमन के लिए द्वार उन्मुक्त कर देता है– इतिहास की यह एक अविस्मरणीय घटना है। पंच नन्द प्रदेश पराभूत होकर भले ही विनष्ट हो, इसकी उसे चिन्ता नही हुई। चिन्ता हुई उसको अपनी सत्ता को सुरक्षित रखने की। यह दिशा संकेत था इस देश में अनैक्य के प्रसार एवं तज्जन्य पदमर्दन एवं विकराल विनाश का।

पृथ्वी राज चौहान के समय में काल भैरव की जो कुदृष्टि इस देश पर पढ़ी उसने जय चन्द की भूल बनकर आर्य संघ के विध्वन्स एवं परकीय संघों के उत्थान की घोषणा कर दी। इस वैषम्य ने लगभग एक सहस्र वर्ष के लिए हमें पराधीनता के विकट पाशों में आबद्ध कर दिया तो क्या आर्यत्व ने पराजय स्वीकार कर ली थी? नहीं "आर्य कभी दास नहीं होगा" यह महामहिम कौटिल्य का प्रमुख सूत्र है। आर्य वह सूर्य है जो घनाच्छदित होने पर भी अपनी स्वतन्त्र सत्ता का परित्याग नहीं करता। घन सघन बनकर उस पर आवरण डाल देते हैं पर उसकी रश्मियों का तेज घनों को विदीर्ण करता हुए एक दिन अपनी आभा प्रकट कर ही देता है। आर्यत्व भी इस पराभव काल में अपने तेज से विहीन नही हुआ। एक क्षण के लिए भी वह परकीय सत्ता को स्वीकार न कर सका। निरन्तर संघर्षरत् रहता हुआ भी वह अपनी सक्षमता को प्रकाशित करता रहा। विजेता इस काल में सुख की नींद सोये हो ऐसा इतिहास से जान नहीं पड़ता। आर्य तेज की यह ज्योति नाना रूपों में प्रकट होती हुई विदेशी बनके दावानल का कार्य करती रही जिसमें वैदेशिकता का एक–एक अंग जलता और भुनता रहा। आर्यत्व उपयुक्त समय पाकर उठता रहा है, पर विजातीयता का अंश उसके चतुर्दिक इतनी अधिक मात्रा में में डराता रहा है कि वह आर्यत्व के उत्थान के लिए अभिशाप सिद्ध हुआ है और हम विजय का वरण करके भी पराभव के अतल तल में गिरते रहे।

इस युग में महर्षि दयानन्द जैसे महाप्राण व्यक्ति ने जन्म लिया। आर्यवंश के उद्धार के लिए उन्होंने जो प्रयत्न किया उसका सुफल भी हमारे समक्ष उपस्थित हो गया। उन्होंने परकीयता की स्वकीयता में परिणत करने का आन्दोलन भी छेड़ा और कहा जब तक हमारी विचारधारा भिन्न–भिन्न है, जब तक हमारे संकल्प एक समान नहीं बनते, जब तक दूसरे देशों की ओर हम लालसा भरी सतृष्ण नेत्रों से देखते हैं और परायों से प्रेरणा प्राप्त करते हैं, तब तक हमारा उत्थान, हमारा कल्याण, हमारा योगक्षेम असम्भव है। सुख और समृद्धि के लिए, मंगल और कल्याण के लिये भेद नही अभेद की आवश्यकता है। जब तक हम भिन्न भिन्न रहेंगे आपस में कटते और मरते रहेंगे अथवा दूसरों के आखेट पशु बनते रहेंगे, जब तक मांगलिक घड़ियों का उदय नहीं होगा।

महर्षि ने इस ऐक्य–सम्पादन के हेतु समस्त धर्मों की एकता पर बल दिया। वेद एकता के लिए प्रमुख आधार शिला थी। उन्होंने समग्र आर्य जाति को वेद के आधार पर एकता के सूत्र में बांधने का सद् प्रयास किया। शुद्धि आन्दोलन द्वारा सबको आर्यत्व के ध्वज के नीचे खड़े हो जाने का निमन्त्रण दिया। आर्यत्व के इस आहवान को अनुभव करके उनके अनुयायी निर्देशित कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए कटिबद्ध हो गये और कुछ समय के लिये तो ऐसा जान पड़ा जैसे आकाश में एकता की ध्वनि गूंज रही है। लोकमान्य तिलक, लाला लाजपत राय तथा अन्य उद्भट देश के नेता अपने पुरुषार्थ से देशोद्धार के पुनीत कार्य में जुट गये। अमर बलिदानी एवं प्रसिद्ध आर्य समाजी पं. राम प्रसाद बिस्मिल, पठान–वंशोद्भव अशफाकुल्ला खां को मातृभूमि के उद्धार यज्ञ में दीक्षित करने लगे। महात्मा गांधी के तप और त्याग ने जातीय एकता का महामन्त्र फूंका। देश की एक भाषा हो, एक लक्ष्य हो यह शंख ध्वनि वातावरण में चतुर्दिक व्याप्त हो गयी। युवकों के बलिदान ने अंग्रेजों के हृदय के भय का संचार कर दिया और वे परिस्थितियों से प्रभावित हो देश को छोड़ने के लिये विवश हो गये । पर जाते–जाते जिस बीज को उन्होंने बोया उसे हम न समझ सके। आज हमारी जो दशा है वह दयनीय है। देश की एकता को सम्पादित करके हमने अपने ही हाथों से छिन्न विच्छिन्न कर दिया। आज न हमारा लक्ष्य एक है, न हमारी भाषा अंग्रेजी के मानस पुत्रों तथा परकीयता प्रेमियों का घृणित वैमनस्य चारों ओर उन्मुक्त कर दिया है दुर्गन्ध आज सबके मस्तिष्कों को दूषित कर रही है। बन्दी का दल–दल भयानक रूप धारण कर रहा है।

R.N. DEL BIL/2007/22120
DL (C)-14/1181/2011-2013

ओ३म्

Date of Posting 12 & 13, at S.R.T. Nagar, Post Office, ND-55

लाला लाजपत राय

लाला लाजपत राय का जन्म पंजाब के मोगा जिले में (जन्म 28 जनवरी 1865) को हुआ था। इन्होंने कुछ समय हरियाणा के रोहतक और हिसार शहरों में वकालत की। ये भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के गरम दल के प्रमुख नेता थे। बाल गंगाधर तिलक और बिपिन चंद्र पाल के साथ इस त्रिमूर्ति को लाल-बाल-पाल के नाम से जाना जाता था। इन्हीं तीनों नेताओं ने सबसे पहले भारत में पूर्ण स्वतन्त्रता की माँग की थी बाद में समूचा देश इनके साथ हो गया। इन्होंने स्वामी दयानन्द सरस्वती के साथ मिलकर आर्य समाज को पंजाब में लोकप्रिय बनाया। लाला हंसराज के साथ दयानन्द एंग्लो वैदिक विद्यालयों का प्रसार किया, जिन्हें आजकल डीएवी स्कूल्स व कालेज के नाम से जाना जाता है। लालाजी ने अनेक स्थानों पर अकाल में शिविर लगाकर लोगों की सेवा भी की थी। 30 अक्टूबर 1928 को इन्होंने लाहौर में साइमन कमीशन के विरुद्ध आयोजित एक विशाल प्रदर्शन में हिस्सा लिया, जिसके दौरान हुए लाठी-चार्ज में ये बुरी तरह से घायल हो गये। उस समय इन्होंने कहा था, मेरे शरीर पर पड़ी एक-एक लाठी ब्रिटिश सरकार के ताबूत में एक-एक कील का काम करेगी। और वही हुआ भी लालाजी के बलिदान के 20 साल के भीतर ही ब्रिटिश साम्राज्य का सूर्य अस्त हो गया। 17 नवंबर 1928 को इन्हीं चोटों की वजह से इनका देहान्त हो गया।

लालाजी की मौत का बदला -

लाला जी की मृत्यु से सारा देश उत्तेजित हो उठा और चंद्रशेखर आजाद, भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव व अन्य क्रांतिकारियों ने लालाजी की मौत का बदला लेने का निर्णय किया। इन जाँबाज देशभक्तों ने लालाजी की मौत के ठीक एक महीने बाद अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर ली और 17 दिसम्बर 1928 को ब्रिटिश पुलिस के अफसर सांडर्स को गोली से उड़ा दिया। लालाजी की मौत के बदले सांडर्स की हत्या के मामले में ही राजगुरु, सुखदेव और भगतसिंह को फाँसी की सजा सुनाई गई।

-मोहनलाल वर्मा

LIVING LIFE WITH A POSITIVE TWIST

Work at being positive by harnessing your personal power and taking charge of your sub-conscious mind. Here are .

(i) Feel good about what you do.
(ii) Think in terms of "can do" and "want to do" rather than "cannot do" and "have to do".
(iii) Display self esteem and confidence by believing in yourself and your abilities.
(iv) Face every challenge head on. Do not let petty upheavels get you down.
(v) Stop feeling sorry for your-self.
(vi) There are two sides to every coin Look at the silver lining and things will not seem as bad as you think they are.
(vii) List out the things you are grateful for in life. Focus on them, when you feel you have been depressed.
(viii) Turn your stabling blokes into stepping stones with a positivity in beart.
(ix) Life is too short to brood aver what went wrong. Discord your, "What want wrong." Discard your "what ifs and might have beens."

An inspiring sign at an office entrance reads "Nagativity is what you leave outside the door."

Be methodical in your work, systematic in your approach, humble in your attitude and polite in your dealings.

LIFE ASKED DEATH :

Why do people love me but hate you?
Because you are a beautiful lie, but I am a painful truth.

- Compiled by - Sudarshan Rai

महर्षि दयानन्द सरस्वती मार्ग का नामकरण

युगपुरुष राष्ट्रसन्त महर्षि दयानन्द सरस्वती जी को स्मरण करते हुए राजेन्द्र प्लेस मेट्रो स्टेशन से शंकर रोड़ तक के मार्ग का नाम महर्षि दयानन्द सरस्वती मार्ग नाम रखा गया है। उत्तरी दिल्ली नगर निगम के यशस्वी पार्षद माननीय श्री राजेश भाटिया जी ने सत्प्रयास से यह कार्य शीध्र संभव तथा सम्पन्न हुआ। इस अवसर दिनांक 9.1.16 को एक विशेष कार्यक्रम का आयोजन किया गया एवं जिसमें राजेन्द्र नगर के पूर्व निगम पार्षद स. मनजीत सिंह खन्ना जी के नाम से भी एक मार्ग का नामकरण किया गया। इस अवसर पर महापौर श्री रवीन्द्र गुप्ता, कामरोस संघ के राजदूत एवं आर्य समाज के विशिष्ट सहयोगी श्री के.एल. गंजू जी तथा अनेक पार्षद, पूर्व मन्त्री आदि उपस्थित थे। आर्यसमाज के प्रधान श्री अशोक सहगल जी ने सभी आगन्तुकों का स्वागत किया एवं इस कार्य के लिए श्री राजेश भाटिया जी का विशेष धन्यवाद प्रकट किया। मन्त्री श्री सतीश मैहिता जी ने स्वामी दयानन्द पर प्रकाश डालते हुए उनसे प्रेरणा लेने के लिए प्रेरित किया। धन्यवाद, शान्ति पाठ के साथ श्री के.एल. गंजू जी द्वारा प्रसाद की उत्तम व्यवस्था के साथ कार्य क्रम सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ।

= मंत्री

Printed and published by **Sh. S.C. Mehta** Secretary on behalf of Arya Samaj, Rajinder Nagar and printed at Gurmat Printing Press, 1337, Sangatrashan, Pahar Ganj, New Delhi-55 Ph. : 23561625 and published at Arya Samaj, Rajinder Nagar, New Delhi-110060. ***Editor :*** **Dr. Kailash Chandra Shastri**